© 2017 IJSRST | Volume 3 | Issue 7 | Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X

प्रो राजेन्द्र मिश्र प्रणीत प्रकाशित संस्कृत शतक : एक समीक्षा

डॉ0 मधु शुक्ला
संस्कृत विभाग,
इलाहाबाद विश्वविद्यालय,
इलाहाबाद।

शतककाव्य का शास्त्रीय आधार क्या है– यह विचारणीय है। प्राचीन तथा नवीन आचार्यों ने काव्य को दृश्य तथा श्रव्य–दो रूपों में विभक्त किया है। दृश्य को ही अभिनेय, रूप तथा रूपक भी कहते हैं। सम्पूर्ण दशरूपक इसी के अन्तर्गत आता है।[1]

श्रव्यकाव्य के अन्तर्गत मुख्यतः पद्य एवं गद्य आते हैं। पद्य भी मुख्यतः दो प्रकार का है– मुक्तक तथा प्रबन्ध।[2] मुक्तक का अर्थ है आगे तथा पीछे के सन्दर्भ से रहित कोई स्वतंत्र पद्य जो अपने आप में परिपूर्ण हो तथा रसानुभूति करा पाने में पूर्ण स्वतंत्र हो। आचार्य आनन्दवर्धन (9वीं शती ई0) तो मुक्तक को अत्यधिक महत्त्व देते हैं।

प्रबन्धकाव्य कथात्मक होता है, अतः उसके पद्य भी आगे–पीछे के कथावृत्तों में बँधे होते हैं।

कभी–कभी दो, तीन, चार या पाँच पद्यों का सन्दर्भ एक–दूसरे से जुड़ा होता है। अतः जब तक उन्हें सामूहिक रूप से न पढ़ा जाय– रसानुभूति नहीं हो पाती है। ऐसे पद्यों को युग्मक, सन्दानितक, कलापक तथा कुलक कहते हैं। कुलक के अनन्तर शास्त्रकारों ने प्रबन्ध संज्ञा को ही मान्यता दी है।[3]

परन्तु धार्मिक स्तोत्रों में पंचक, सप्तक, अष्टक, पंचदशी, विंशतिका, त्रिशती, चतुश्शती, पंचशती, सप्तशती तथा सहस्रक भी प्रख्यात हैं। यशोभूषण में इनका विस्तृत व्याख्यान किया गया है।[4] इन समस्त धार्मिक काव्य–संज्ञाआं में ही शतक भी आता है जिसमें मूलतः सौ पद्य होते हैं।

शतकों को संस्कृत–काव्यजगत् में बड़ी ख्याति मिली। इनमें न केवल देवस्तुतियाँ बल्कि नीति, शृंगार, वैराग्य अन्योक्ति तथा व्यङ्ग्य काव्य भी लिखे गये। प्राचीन कवियों में भी जहाँ आनन्दवर्धन ने देवीशतक, बाणभट्ट ने चण्डीशतक, मयूरकवि ने सूर्यशतक तथा भल्लट ने अन्योक्तिशतक लिखा, वहीं भर्तृहरि ने नीतिशतक, वैराग्यशतक तथा शृंगारशतक की रचना की। परवर्ती युग के शतककारों में क्षेमेन्द्र, धनददेव, नीलकण्ठ दीक्षित, गुमानी कवि आदि का नाम उल्लेखनीय है।

काव्यशास्त्रीय दृष्टि से विचार करने पर शतककाव्य खण्डकाव्य के पर्याय अथवा नामान्तर प्रतीत होते हैं। इस सन्दर्भ में वर्तमान युग के सर्वश्रेष्ठ काव्यशास्त्री प्रो0 अभिराजराजेन्द्र ने, यशोभूषण में निर्णयात्मक स्वर

---

1 दृश्यश्रव्यप्रकाराभ्यामादौ काव्यं द्विधामतम्।
रूपरूपकनाट्यानि दृश्यनामान्तराणि च।।–अभि0यशो0, पृ0 117

2 पद्यं पुनर्द्विधाख्यातं प्रायशः पूर्वसूरभिः।
मुक्तकादिप्रबन्धाभ्यां तदिदानीं प्रतन्यते।।

3 पूर्वाऽपरसन्दर्भाभ्यां मुक्तं मुक्तकमुच्यते।
द्वाभ्यां मिथोऽवसक्ताभ्यां युग्मकं जायते पुनः।।
पद्यत्रयेण सन्दृब्धं सन्दानितकमुच्यते।
कलापकं चतुर्भिश्च पंचभिः कुलकं मतम्।।–अभि0यशो0, पृ0 210

4 सप्तकं चाष्टकं ख्यातं दशकं विंशतिस्तथा। पंचाशिका शती यद्वा शतकं त्रिशती पुनः।।
ततः पंचशती ख्याता ख्याता सप्तशती तथा। सहस्रकमपि ख्यातं समवाप्तपरम्परम्।। –अभि0यशो0, पृ0 211

में कहा है कि पद्य संख्या के वैशिष्ट्य वश ही खण्डकाव्य को शतककाव्य (Century Poem) कहा जाता है।[5]

शतककाव्यों की परम्परा प्रत्येक कालखण्ड में अतिशय लोकप्रिय रही है। कथावृत्त को लेकर विशाल महाकाव्यों की सर्जना की तुलना में शतककाव्य लिखना कवियों के लिये सर्वथा सुकर रहा है। पाठकों के लिये भी उतना ही सुखद हैं उन्हें एक ही बैठक में पढ़ डालना।

संस्कृत में तो अनेक प्रतिभाशाली कवि **घटिकाशतक** के नाम से जाने जाते रहे हैं। ये श्रेष्ठ कवि एक ही घण्टे में सौ अनुष्टुप् छन्छों की रचना करने में समर्थ होते थे। मुझे यह बताते हुए अपार हर्ष एवं अभिमान का अनुभव हो रहा है कि इस ग्रंथ के नायक **प्रो0 राजेन्द्र मिश्र जी भी घटिकाशतक आचार्य ही हैं।** उनमें यह सामर्थ्य है कि वह मात्र एक घण्टे में सौ छन्द लिख सकें।

शतकों का विषय देवस्तुति तो होता ही है। परन्तु विषय कोई और भी हो सकता है– यात्रावर्णन, धर्म, संस्कृति, समाज, राजनीति, आत्मानुभव आदि।

यदि हम संस्कृत का अतीत इतिहास पढे तो ज्ञात होता हे कि एक तथा अनेक शतकों के रचनाकार कवि हुए हैं। बाण, मयूर, आनन्दवर्धन यदि एकशतककार हैं तो भर्तृहरि **शतकत्रय** के रचनाकार। परवर्ती युग के कुछेक कवियों ने तो दशो शतकों का प्रणयन किया है।

परन्तु कोई सारस्वत–साधक **पचास से भी अधिक शतक** प्रणीत कर ले यह संसार का नवाँ आश्चर्य ही है। अभिराज राजेन्द्रमिश्र जी ऐसे ही वाणी के वरदपुत्र है जिन्होंने 1972 से लेकर अब तक अनेक शतकों की रचना की हैं। उनकी प्रकाशित शतक रचनाएँ हैं– 1. आर्यान्योक्तिशतकम् (1983), 2. पराम्बाशतकम् (1981ई0), 3. शताब्दीकाव्यम् (1987), 4. अभिराजशप्तशती (1987), 5. पंचकुल्या (1993ई0), 6. धर्मानन्दशतकम् (1993ई0), 7. करशूलनाथशतकम् (1996ई), 8. संस्कृतशतकम् (1999ई0), 9. अभिराजसहस्रकम् (2000ई0)

इन समस्त कृतियों में कवि–प्रणीत अट्ठाईस शतककाव्य प्रकाश में आए हैं। **सप्तवेणी** तथा **शतकपंचदशी** नामक काव्यसंग्रह राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित हो रहे हैं। यदि इन बाईस (7+15=22) शतकों को भी पूर्व प्रकाशित शतकों के साथ जोड़ दिया जाय तो प्रो0 राजेन्द्र मिश्र के प्रकाशित शतकों की संख्या पचास हो जायेगी। इसके बाद भी अनेक अप्रकाशित शतक रह जायेंगे, जैसे– **शिवभारतशतकम्, प्रमाणिकाशतकम्, श्रीशतकम्, विद्युन्मालाशतकम्, स्पेनयात्राशतकम् आदि।**

प्रो0 मिश्र की अनितरसाधारण कवित्व–प्रतिभा, अविश्रान्त सर्जनोत्साह तथा जीवट देखकर आश्चर्य होता है। ऐसे युगजीवी कवि की रचनाओं का समीक्षाभाव तो और भी अखरता है। वह जिस इलाहाबाद विश्वविद्यालय के स्नातक रहे, जहाँ उनका अध्यापनकौशल, अभिनयोन्मेष प्रख्याततम रहा–वहीं पर उनकी

---

[5] खण्डकाव्यमिदं चैव स्वेतिवृत्तानुरोघतः।
विविधान्यभिधानानि पृथगर्थानि गच्छति।
दूतकाव्यमिदं प्रोक्तं दौत्यकर्मप्रसंगतः।
मेधो दूतीकृतो यस्मान्मेघदूतं ततो न्विदम्।।
देवस्तुतिप्रवृत्त्या च स्तोत्रकाव्यं तदुच्यते।
पद्यानां शतसंख्यत्वात् शतकाख्यं तदेव हि।।–अभि0, पृ0 224

रचनाओं पर अत्यल्प अथवा नहीं के बराबर कार्य हुआ। हमारी पीढ़ी के छात्रगण तो उन्हें जीवित किंवदन्ती (Living Legend) के रूप में सुनते, पढ़ते तथा देखते हैं। हमारे सभी गुरुजन तो प्रो0 अभिराजराजेन्द्र जी के साक्षात् शिष्य ही रहे हैं। परन्तु इलाहाबाद विश्वविद्यालय ही एकमात्र अपवाद है अन्यथा प्रो0 मिश्र की कृतियों पर शोधकार्य सम्पन्न कर पी0एच0डी0/ विद्यावारिधि प्राप्त करने वाले छात्रों की संख्या अब साठ से भी अधिक हो चली है। यह सम्पूर्ण विवरण हमें अन्यत्र उपलब्ध है।

मैंने इसी कमी की पूर्ति के लिये यह साहस किया है कि मैं प्रो0 मिश्र के समस्त शतककाव्यों का परिचय संस्कृत–जगत् को दे सकूँ। मेरी मति इतनी परिष्कृत एवं प्रौढ़ तो नहीं कि प्रो0 मिश्र के काव्य का मर्म समीक्षित कर सकूँ। परन्तु मेरा श्रम इतने से ही सार्थक है कि उनके समस्त शतककाव्य इस लघुग्रन्थ के माध्यम से, संस्कृत पाठकों के समक्ष आ जायेगें।

प्रो0 राजेन्द्र मिश्र–प्रणीत शतकों का क्रम उनके **आर्यान्योक्तिशतकम्** से प्रारम्भ होता है। चूँकि प्रो0 मिश्र की डी0फिल्0 डिग्री का शोध विषय था– **अन्योक्ति के उद्भव एवं विकास का समीक्षात्मक अध्ययन** (A Critical study of the Origin and Development of Anyokti) इसलिये स्वाभाविक था कि कविह्रदय डॉ0 मिश्र के मन में अन्योक्तियों के प्रति आस्था–अनुराग का भाव पैदा होता। अपना शोधप्रबन्ध प्रस्तुत करनेके अन्तराल में ही उन्होंने आर्या छन्द में सौ नई अन्योक्तियाँ लिखी, जिनका प्रकाशन सन् 1972 ई0 में **आर्यान्योक्तिशतकम्** के नाम से हुआ। तब से लेकर आज तक प्रो0 मिश्र की शतक–काव्यों की रचना–परम्परा अबाध गति से चली आ रही है। हम प्रो0 मिश्र–प्रणीत इन शतकों को निम्न शीर्षकों में विभक्त कर सकते हैं–

(क) साहित्यिक शतक

1. आर्यान्योक्तिशतकम्
2. सम्बोधनशतकम्
3. यवसाहित्यशतकम्
4. प्रबोधशतकम्
5. मृगमृगेन्द्रान्योक्तिशतकम्
6. दोघकशतकम्
7. श्रीशतकम्
8. विद्युन्मालाशतकम्

(ख) धार्मिकशतकम्

9. पराम्बाशतकम्
10. सपर्याशतकम् (नवाष्टकमालिका)
11. करशूलनाथशतकम्
12. वरदेश्वरशतकम्
13. शनिशतकम्
14. कविसहस्रनामशतकम्
15. ऋषिसहस्रनामशतकम्
16. हरगौरीगंगाशतकम्
17. शिवभारतशतकम्

(ग) सांस्कृतिकशतकम्

18. प्रभातमंगलशतकम्
19. देववाणीहुंकारशतकम्
20. संस्कृतशतकम्
21. अनुभूतिशतकम्
22. कस्माच्छतकम्

(घ) यात्रात्मकशतकम्

23. विमानयात्राशतकम्
24. बालीप्रत्यभिज्ञानशतकम्
25. बालीविलासशतकम्
26. उज्जयिनीशतकम्
27. घारामाण्डवीयशतकम्
28. हिमाचलशतकम्
29. निमिपालशतकम्
30. त्रिपुराशतकम्
31. वैशालीशतकम्
32. गुर्जरशतकम्
33. स्पेनयात्राशतकम्
34. रूद्राक्षशतकम्

(ङ) राष्ट्रियशतकम्

35. नव्यभारतशतकम्
36. भारतीपरिदेवनशतकम्
37. विस्मयशतकम्
38. अयोध्याशतकम्
39. पाकशासनशतकम्
40. प्रमाणिकाशतकम्
41. शताब्दीशतकम्

(च) अधिक्षेपात्मकशतकम्

42. चतुर्थीशतकम्
43. सुभाषितोद्धारशतकम्
44. नवरत्नसमीक्षाशतकम्
45. अभिराजशतकम्

(छ) चरितात्मकशतकम्

46. धर्मानन्दशतकम्
47. तुलसीप्रशस्तिशतकम्
48. विवेकानन्दशतकम्

(ज) वैयक्तिकशतकम्

49. मातृशतकम्
50. सौवस्तिकशतकम्
51. वियोगव्याहारशतकम्
52. उपालम्भशतकम्
53. संकटमोचनशतकम्
54.

शतक की यह सूची मैंने शतकों के प्रतिपाद्य को दृष्टि में रखकर बनाई है। इस सूची के निर्माण में मैंने श्रद्धेय प्रो0 मिश्र का भी परामर्श एवं समर्थन प्राप्त किया है।

अब इन शतकों का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत करना चाहूँगी। सर्वप्रथम वे शतक प्रस्तुत हैं जो प्रकाशित हो चुके हैं स्वतंत्र रूप से अथवा किसी संकलन के अंग बन कर।

प्रथम प्रकाशित शतक है– **पराम्बाशतकम्**।[6] प्रो0 मिश्रप्रणीत यह शतक मूलतः एक स्तोत्रकाव्य है जिसमें कुल 104 पद्य हैं, प्रारम्भ से 101 तक भुजंगप्रयात छन्द में, पद्य 102 वसन्ततिलका छन्द में तथा अन्तिम दो पद्य अनुष्टुप् छन्द में है। इस लघुग्रन्थ का सम्पादन डॉ0 दयानन्द मिश्र जी ने किया है जो प्रो0 मिश्र के मित्र भी हैं तथा शिष्य भी। उन्होंने प्रो0 मिश्र के ही निर्देशन में शोधकार्य कर डी0फिल्0 उपाधि प्राप्त की है।

स्तोत्रकाव्य होते हुए भी पराम्बाशतकम् स्तोत्रकाव्यों की प्राचीन परम्परा से सर्वथा विलक्षण है। संस्कृत के स्तोत्रकाव्यों में प्रायः उन–उन देवताओं के चरितवर्णनपरक विशेषणों का ही प्रयोग होता है। उदाहरणार्थ भगवती दुर्गा के स्तोत्र में ये विशेषण–शुम्भनिशुम्भमर्दिनी, चण्डमुण्डहन्त्री, महिषासुरमर्दिनी, दुर्गतिनाशिनी आदि।

परन्तु प्रो0 मिश्रप्रणीत इस स्तोत्रकाव्य में माँ के प्रति एक असहाय पुत्र की भावनाएँ व्यक्त की गई हैं। यह शतक माँ–बेटे के प्रगाढ़ सम्बन्ध को प्रकाशित करता है। कवि कहता है–

हे माँ! वह कौन दिन होगा कि वेणी–बन्धन में गूँथने योग्य पुष्पों को, बाग–बगीचों में खोजता हुआ, मैं तुम्हारी आज्ञा को पूर्ण कर सकूँगा।

हे माँ! वह कौन दिन होगा कि मैं तुम्हारे वाहन सिंह के सटाभार को ऊँगलियों से सहलाऊँगा?

वह कौन दिन होगा कि सेवक बनकर तुम्हारे गृहद्वार पर उगे तृणों को साफ कर तुम्हारी प्रशंसा प्राप्त करूँगा।

ये उपर्युक्त भाव प्राचीन स्तोत्रों में नहीं मिल पायेंगे। कवि ने हृदय खोलकर अपनी विपत्ति–गाथा भगवती पराम्बा (दुर्गा) के सामने प्रकट की है तथा उनसे अपनी रक्षाकी प्रार्थना की है। कुछ पद्य द्रष्टव्य हैं–

पुरो धावमानं जनं धर्मभीरूं
समाजोऽयमम्बाऽनुधावत्यजस्रम्।
स्वयं रावणाऽनुद्रुतः किन्तु रौति

---

[6] बैजयन्त प्रकाशन, 8 बाघम्बरी रोड, इलाहाबाद, सन् 1981ई0

त्वमेव त्वमेव त्वमेवाम्ब! पाहि।।

अलीकानुशंसी ह्यलीकानुभाषी
हय्लीकप्रियोऽयं ह्यलीकोपचारः।
समाजो मयोपेक्षितो दुःखभाजा
त्वमेव त्वमेव त्वमेवाऽम्ब पाहि।।
ऋतं वा S नृतं भाषितं जीवने यत्
प्रमाणं त्वमेवासि मातः किमन्यैः!
जगद् दानवं तत्तृणायैव मन्ये
त्वमेव त्वमेव त्वमेवाऽम्ब! पाहि।।

—पराम्बा0 91, 92, 94

पराम्बाशतकम् एक ऐसा विलक्षण स्तोत्रकाव्य है, जिसमें कवि ने पण्डितराजजगन्नाथ की तरह आर्तभाव से अपने जीवन का दैन्य—दुःख, सन्ताप—पीड़ा, अवमानना—उपेक्षा तथा निन्दाभाव को माँ के समक्ष प्रकट किया है। ग्रन्थ की भूमिका में सम्पादक ने ठीक ही लिखा है— **'साहित्यकार जहाँ समाज की सर्वविधचेतना का प्रतिनिधि और साक्षी होता है, देवोपम सद्गुणों का केन्द्र होता है, वहीं नियति के अभिशाप को भोगभूमि भी।'**

प्रो0 मिश्र के जीवन को हम जितना जान सके है उनके ग्रन्थों तथा प्रत्यक्ष सम्पर्कों से— उससे स्पष्ट हो जाता है कि उन्हें जीवन में अपार संघर्ष करना पड़ा है। उनका जीवन अकारणवैरियों से ओत—प्रोत रहा है। एक विद्यार्थी के रूप में भी हमने अनुभव किया है कि जिस संस्कृत—विभाग के प्राध्यापकगण उनके साक्षात् शिष्य रहे हैं, उन्होंने भी उनकी सदैव उपेक्षा की है। उनकी वैदुषी का अमृत हम नहीं प्राप्त कर सकें।

आर्यान्योक्तिशतकम् का प्रकाशन 1983ई0 में हुआ वैजयन्त प्रकाशन से। इस ग्रन्थ की भूमिका में कवि ने स्वयमेव लिखा है कि इसका प्रकाशन रचना के आठ वर्ष बाद हो रहा है। इसका अर्थ यह हुआ कि यह शतक सन् 1967ई0 में लिखा गया।

इस ग्रन्थ के विषय में रचनाकार ने स्वयं लिखा है भूमिका में— नाट्पंचगव्यम् तथा अकिंचनकांचनम् के अनन्तर प्रकाशित होने वाली यह मेरी तीसरी मौलिक काव्यकृत्ति है। अन्योक्ति के उद्भव तथा विकास पर मेरा शोध कार्य सन् 66 के पूर्व ही सम्पन्न हो चुका था। 11 जनवरी 67ई0 को मौखिक परीक्षण के अनन्तर मुझे प्रयाग विश्वविद्यालय की डी0फिल्0 उपाधि पाने का सौभाग्य मिला। मुझे उन दिनों की बड़ी मीठी स्मृति है जबकि मेरा कवित्व—परिवेष अन्योक्तिमय हो चुका था। समूचा अन्यापदेश—वाङ्मय मेरे मन में अंकित सा हो उठा था। फलतः उस एकान्त वातावरण ने ही मुझे प्रेरित किया कि मैं नए छन्द में, नए दृष्टिकोण के साथ अन्योक्ति—सर्जना करूँ तथा अन्यापदेशकार पूर्वसूरियों के प्रति अपनी कृतज्ञता ज्ञापित कर सकूँ।

इस प्रकार सन् 1967ई0 के पहले पखवारे (दो जनवरी से चौदह जनवरी) में इस लघु ग्रन्थ की सर्जना हुई।

आर्यान्योक्तिशतकम् में कुल 107 पद्य है जिनमें मात्र अन्तिम पद्य आत्मपरिचयात्मक है तथा शार्दूलविक्रीडित छन्द में है। शेष 106 पद्यों में एक से सौ तक के पद्यों में अन्योक्तियाँ हैं, वह भी आर्याछन्द में। पद्य संख्या 101 से 106 तक आर्याछन्द में ही कवि का आत्मपरिचय प्रस्तुत किया गया।

इस शतक की दो प्रमुख विशेषताएँ हैं। एक तो यह कि अधिकांश अन्योक्तियों के विषय नए हैं। दूसरी विशेषता यह है कि सारी अन्योक्तियाँ मात्र आर्याछन्द में ही लिखी गई है।

चूँकि प्रो0 मिश्र ने अन्योक्ति पर ही शोधकार्य किया अतएव अन्योक्ति– विषयक उनका ज्ञान अत्यन्त प्रौढ़ तथा प्रामाणिक है। उन्होंने जानबूझ कर अन्योक्तियों के ऐसे विषय चुने हैं जो पिछली सहस्राब्दी में उपेक्षित रहे। उदाहरणार्थ– शम्भु, गंगा, श्वान (अल्सेशियन डॉग) आधुनिक जमाने का मंत्री, निरपराध अपराधी, वैद्य, किन्नर, महुवा, आधुनिक संस्कारहीन छात्र, बूढ़ा घोड़ा, वृश्चिक, साला, उष्ट्र (ऊँट) गर्दभशिशु आदि सारे विषय नवयुगीन है।

इन अन्योक्तियों का आनन्द ही विलक्षण है। अन्योक्तियों में अप्रस्तुत की तो अभिधया प्रस्तुति होती है। जबकि प्रस्तुत पक्ष व्यंजनाशक्ति के द्वारा व्यङ्ग्य होता है।

कुछ अन्योक्तियाँ उद्धृत की जा रही है–

कदली– सन्ततिसौख्यमनल्पं प्रायो भुवि भवत्येव सर्वेषाम्।
किन्तु किमस्ति कदल्याः क्षयं याति या सन्तत्यैव।।

नेत्र– नयन! न तव दोषोऽयं यत्त्वं पश्यसि कृष्णमेव समग्रम,
नागर एव सदोषो येन धृतं तादृशमुपनेत्रम्।।

मंत्री कुरुकुरु तावदभीष्टं स्वार्थं साधय मन्त्रिपदमवाय्य।
यावन्नास्यपदस्थो रे खल! पल्लवय स्वकीयान्।।

साला श्याल! जनिस्तव सफला प्रदाय भगिनीं जनाय कस्मैचित्।
तद्गृहमुखोऽसि जातः भ्रमति वराकस्सहोदरस्तु।।

गुलाब अयि पाटल! मधुकामं व्यवसितयामं कथं कदर्थयसि?
अलिरयमेव तवालं परिमलमाल्यं दिशि–दिशि किरति।।

अभिराजसप्तशती का प्रकाशन वैजयन्तप्रकाशन, इलाहाबाद द्वारा सनृ 1987ई0 में सम्पन्न हुआ। इसमें संकलित शतकों की रचनातिथियाँ यद्यपि भिन्न हैं तथापि सबकी समवेत प्रकाशन तिथि (Combined Publication Date) एक ही है। इस काव्यसंकलन मैं निम्नलिखित शतकों का संकलन हैं–

1. नव्यभारतशतकम्
2. मातृशतकम्
3. प्रभातमंगलशतकम्
4. सुभाषितोद्धारशतकम्
5. चतुर्थीशतकम्
6. सम्बोधनशतकम्
7. भारतदण्डकम्

यद्यपि अभिराजसप्तशती नाम से प्रकट होता है कि इसमें सात शतक होंगे। परन्तु संकलन का एक काव्य 'भारतदण्डकम्' शतककोटिक नहीं है। यह दण्डक छन्दों में लिखा गया एक काव्य है जिसमें आठ दण्डकों का अनुच्छेद हैं। इस प्रकार, इस संकलन में 6 शतकों का ही संकलन मानना चाहिये।

प्रथम शतक **नव्यभारतशतक** है। इस शतक के नाम से ही सुस्पष्ट है कि इसमें नए स्वातंत्र्योत्तर भारत का चित्रण किया गया है। पूरे शतक में कुल 102 अनुष्टुप् छन्द है जिनमें अन्तिम 12 छन्द परिचयात्मक तक रचनाकाल– विषयक है।

परिचयात्मक पद्यों को पढ़ने से ज्ञात होता है कि कवि के द्वारा यह शतक अपने तीन गुरुजनों – प्रो0 आद्याप्रसाद मिश्र, प्रो0 लक्ष्मीकान्तदीक्षित तथा प्रो0 चण्डिकाप्रसादशुक्ल की सेवानिवृत्ति से उपजी, अपनी वेदना को हल्का करने के लिये प्रणीत किया गया– 1981ई0 में।[7]

यह शतक अत्यन्त निर्भयता तथा बेबाकी के साथ लिखा गया है। कवि ने अतीत भारत का गुणगान करते हुए, नए भारत की दुरवस्था का अत्यन्त भयावह चित्रण किया गया है। समाज में व्याप्त गहन भ्रष्टाचार, आर्थिक धाँधली तथा घूसखोरी ने आजके भारतीय–समाज को खोखला बना दिया है।

जातिद्रोहानलज्वालापरीता राष्ट्रसन्ततिः।
साम्प्रतं निहताजाता स्वकीयैरेव कल्मषैः।।
ब्राह्मणः क्षत्रियं द्वेष्टि क्षत्रियश्चापि वैश्यकम्।
द्वेष्टि वैश्योऽपि शूद्राख्यं शूद्रो द्वेष्टि निजावरान्।।
चातुर्वर्ण्यव्यवस्थायाः सर्वोदयविधायकम्।
सौख्यलाभकरं लक्ष्यं केषामपि न सम्मतम्।।

–नव्य0 89–91

जिस राष्ट्र की स्वतंत्रता के लिये भगतसिंह, सुखदेव, रोशनसिंह, अशफाकउल्ला, रामप्रसाद विस्मिल तथा चन्द्रशेखर आजाद जैसे राष्ट्रभक्तों ने फाँसी का फन्दा चूमा वहीं राष्ट्र आज विपन्न है। लोकतंत्र के प्रहरी हमारे नेतागण ही राष्ट्र की इस दुर्दशा के लिये जिम्मेदार हैं। कवि कहता है–

तदेव भारतं राष्ट्रं प्राप्तभूरिसमस्यकम्।
पीड्यते नितरां हन्त लोकतंत्रसमाश्रितम्।।
आसन्दिकैकरक्षार्थं राजनीतिविशारदाः।
मौढ्यशाठ्यग्रहग्रस्ता विक्रीणन्ति धरामिमाम्।।
आचारसंहिता लुप्ता छिन्नो धर्ममहीरूहः।
सामाजिकसदाचारो बन्धुबान्धवसौहृदम्।।
अधरोत्तरविवेकः कार्याऽकार्यविनिर्णयः।
कुलग्रामभयं नष्टं स्वैराचारोऽभिवर्तते।।–नव्य0 16–20

---

[7] सेवानिवृत्तिंसन्दृश्य वांछाकल्पमहीरुहाम्।
त्रयाणां विदुषां दीनो मोहभावमुपागतः।।
उपाध्यायवियोगोत्थां पीडामेव विनोदयन्
नव्यभारतपीडाया विस्तरं विदधाम्यहम्।।
शर्वरीशवसुग्रहसूर्यसम्मितवत्सरे।
चैत्रकृष्णद्वितीयस्यां सोमे काव्यमिदं कृतम्।।–नव्य0

मातृशतकम् की रचना सन् 1982ई0 के भाद्रपदमास की त्रयोदशी तिथि, बुधवार के दिन हुई।[8] इसमें कुल 104 पद्य हैं जिनमें पद्य 102 तथा 103 शार्दूलविक्रीडित छन्द में है। प्रारम्भ के पाँच पद्य वसन्ततिलक में, छठाँ तथा सातवाँ पद द्रुतविलम्बित में तथा शेषशतक अनुष्टुप् छन्द में प्रणीत है। यह शतक प्रो0 अभिराजराजेन्द्र की **उत्कट मातृभक्ति** का प्रतीक है। इसमें उन्होंने सम्पूर्ण जगत् को मातृशक्ति से संवलित मानते हुए, अपनी जन्मदात्री **महीयसी अभिराजी देवी** की त्याग–तपस्या तथा पुत्र–प्रेम का विलक्षण वर्णन किया है।

माँ ही कवि के लिये सर्वस्व है। माता परा देवता! वह प्रारम्भ में ही कहते हैं–

यत्स्तन्यपोषणभरैरमृतायमानै–
राद्यन्तमध्यरहितोऽपि जगन्निकायः।
वत्सीभवन्ननु विकासततिं प्रपेदे
ताम्मातरं प्रसविनीं जगतां नतोऽहम्।।
पूताऽभिराजजननी यदि नाऽभविष्यत्
जायेत हन्त भुवि जातु कुतोऽभिराजः!
तस्मात्ततोऽपि महतीं महतां सवित्री–
मम्बां स्वजीवितगतिं नितरां प्रपद्ये।।

कवि कहता है कि हे विधे! न मैं धन–ऐश्वर्य चाहता हूँ न ही मुक्ति का सुख। बस प्रार्थना यही है कि जब–जब पृथ्वी पर मेरा जन्म हो **बबना** ही मेरी जन्मदात्री हो[9]–

जगति भूतिततिं नहि कामये दिवि न मुक्तिसुखं क्रियतेऽर्थना
अयि विधैः! बबनैव जनिप्रदा भवतु में खलु जन्मनि जन्मनि।।

जो शरीर मिला वह माँ की ही देन है, उसी के रक्त–मांस से निर्मित है। अतः माँ के सुख, आनन्द, पोषण के लिये कवि उसे भी देने का संकल्प करता है। कवि के लिये माँ ही क्षिति, जल, पावक, गगन और समीर है, वही स्वर्ग तथा मोक्ष है। उसकी निष्ठा है कि आयु के जितने दिन माँ के आँचल में कटे, वही स्वर्ग–सुख के दिन थे–

इन्द्रियव्रातसंश्लिष्टं सर्वमेव कलेवरम्।
त्वत्प्रदत्तमहं जाने गुणकर्मसमन्वितम्।।
यदीदं तव रक्षार्थं भृत्यै तोषाय वा मुदे।
अपेक्ष्यते तदा दातुं सन्नद्धोऽस्मि प्रतिक्षणम्।।
त्वं भूस्त्वमसि दिक्चक्रं त्वमाकाशमसि ध्रुवम्।
स्वर्गस्त्वमेव मोक्षाय त्वम्मे प्राणगतिश्शुभा।।
मातर्यावन्ति वीतानि भवदंचलमण्डपे।
आयुषो मम वर्षाणि स्वर्गसौख्यं तदेव मे।।–मात0 84–87

---

[8] ग्रहरामखनेत्राब्दे विक्रमवर्षेऽसिते च भाद्रपदे।
बुधवासरे समाप्तं मातृशतकं तिथौ त्रयोदश्याम्।।–मातृ0 104

[9] कवि की माँ का नाम अभिराज देवी है। परन्तु अपनी पाँच बहनों तथा दो भाइयों में ज्येष्ठ अर्थात् प्रथम सन्तान होने के कारण परिवार में उसे 'बबना' या 'बबनी' कहकर संबोधित किया जाता था।

यह लघु काव्य किसी भी मातृभक्त के लिये गीता के ही समान पाठ करने योग्य है। इसे पढ़कर स्वर्गीया श्रीमती अभिराजी देवी के चरणों में मस्तक विनत हो जाता है जिन्होंने 24 वर्ष की कच्ची वय में वैधव्यभार सहते हुए भी कवि को सफलता के इस सोपान तक पहुँचाया।

प्रभातमंगलशतकम्– की रचना भी विक्रमाब्द 2039 के आश्विन पितृपक्ष में रविवार के दिन (सन् 1982ई0) हुई है।[10] इसमें कुल 104 पद्य हैं जिनमें प्रारम्भ से सौ तक वसन्तलिक में, पद्य 101 शार्दूलविक्रीडित में तथा 102–4 तक अनुष्टुप् में हैं।

प्रातःकाल हम दक्षिण की प्रख्यात गायिका श्रीमती सुब्बालक्ष्मी के कोकिलकण्ठ में तिरूपतिभगवान् बाला जी का प्रभातस्तोत्र सुनते रहते हैं। उसी की देखा। देखी अन्यान्य मन्दिरों में भी विभिन्न देवी–देवताओं के प्राभातिक उत्थापनगीत चल पड़े हैं।

महाकवि अभिराजराजेन्द्र ने उसी आदर्श पर इस शतककाव्य की रचना की है। परन्तु इसकी मौलिकता यह है कि कवि ने भारत राष्ट्र को ही सर्वश्रेष्ठ देवता मानकर, उसी का प्रभातमंगल लिखा है। वह सप्तर्षियों, सप्तमोक्षदापुरियों, सप्तपर्वतो, सप्तपवित्रनदियों, सप्त पुण्यश्लोक नरपतियों तथा भारत राष्ट्र के अन्यान्य गौरवपूर्ण प्रतीकों की प्रशस्ति गाता हुआ राष्ट्रवासियों को प्रभात की शुभकामना देना चाहता है। इस प्रकार, यह शतक आद्यन्त राष्ट्रिय भावना से ओत–प्रोत एक प्रबोधगीत माना जा सकता है। इसमें प्रो0 मिश्र का कल्पना– बिम्ब तथा अलंकारमण्डित कवित्व पढ़ते ही बनता है।

कवि ने भारत के जिन प्रतिमानों की वन्दना की है वे संभवतः पहली बार संस्कृत कविता के विषय बने हैं–

कुन्ती विदेहतनया सुभगा सुनीतिः
पत्नी हिरण्यकशिपोरथ वा कयाधूः।
श्रीराघवेन्द्रजनती विदुलायशोदा
अम्बा दिशन्तु मम सप्त शुभप्रभातम्।।
ज्ञानेश्वरश्च तुलसी नरसी च मीरा
चैतन्यनानककबीरसमर्थसंज्ञाः।
अण्डालभक्तरविदासमुखा दशोर्ध्वाः
कुर्वन्तु मे मधुमयं नवसुप्रभातम्।।
यत्सम्भवे परिणये मरणे च तुल्यं
संस्कारकर्मणि सदा निखिलेपि राष्ट्रे।
प्रोच्चार्यते सविनयं ननु संस्कृतं तत्
देवार्चितं दिशतु मे नवसुप्रभातम्।।

वस्तुतः प्रो0 मिश्रप्रणीत यह अकेला शतक ही विस्तृत (प्रतिपद) समीक्षा करने पर एक स्वतंत्र ग्रन्थ बन सकता है। परन्तु यहाँ केवल उसका नाम्ना स्मरण मात्र किया जा रहा है।

---

[10] रात्रिजागरसम्भूतं काव्यमेतन्मया कृतम्।
आस्तिकानां मुमुक्षूणां प्रबोधाय, न केलये।।
पितृपंक्षे द्वितीयायां ग्रहरामाभ्रयुग्मके। रविवारे त्रियामायामाश्विने वदि वैक्रमे।।

सुभाषितोद्धारशतकम् की रचना कवि ने अप्रैल 1985ई0 में की जैसा कि उसने स्वयं शतक के अन्तिम पद्य 102 में लिखा है–

पंचाशीतितमे वर्षे रिव्रस्तारव्येऽप्रिलमासके।
शती पूर्तिभियं याता श्लोकानां, भावगर्भिता।।

प्रस्तुत शतक को हम **विडम्बनकाव्य** (Parody) कह सकते हैं। इसमें कवि ने चिर–परिचित स्मरणीय सुभाषितों का विडम्बन प्रस्तुत किया है।

जो सुभाषित प्राचीन कवियों द्वारा किन्हीं और सन्दर्भों में प्रयुक्त किये गए हैं उन्हें कवि आज के किसी सन्दर्भ में उपन्यस्त कर शिष्ट हास्य की प्रस्तुति करता है। ऐसा करने में कवि का सांस्कारिक प्रतिभाविलास तथा कवित्वनिकष स्वतः प्रकट होता है। यह एक प्रकार का व्यङ्ग्यकाव्य है, जो विपरीत लक्षणा के द्वारा पाठकों को आनन्दविभोर कर देता है। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं–

संस्कृतं नाम दैवी वाक् यदिदं दण्डिनोदितम्।
तस्माद्धि राक्षसा जाता राष्ट्रे संस्कृतशत्रवः।।
केयमलीकलोकोक्तिः सर्वमात्मवशं सुखम्।
पारवश्यविहीनाः किं भिक्षुकाः सौख्यशालिनः।।
कान् पृच्छामः सुराः स्वर्गे निवसामो वयं भुवि।
किं वास्ति सुन्दरी रम्भा किमुता हो जयप्रदा!!
माता शत्रुः पिता वैरी तनयो येन भूतले।।
पाठितोऽपिति वृत्तमर्थं हिण्डते नु पुरे–पुरे।।
तावन्न शोभतेविद्वान् यावत् किंचिन्न भाषते।
तावच्च शोभते मूर्खो यावत्किंचिन्न भाषते।।
विश्वविद्यालये को वा नियुक्तो न बुधायते!
अश्मापि याति देवत्वं महद्भिः सुप्रतिष्ठितः।।

इन सुभाषितों का कवि ने उद्धार किया है क्योंकि ये आधुनिक भावबोध को प्रकट करते हैं। कवि स्वयं कहता है कि इस व्यङ्ग्यकाव्य का एकमात्र उद्देश्य है सात्त्विक मनोरंजन, न कि किसी व्यक्ति–विशेष की अवमानना–

कस्मैचिदत्र नाक्षेपः कस्यापि नावमानना।
मनोरंजनमात्राय कृत एष परिश्रमः।।
चतुर्थीशतकम् की रचना 26 नवम्बर 1985ई0 गुरुवार के दिन हुई–
स्वादनागरसेन्द्वब्दे खिस्तीये गुरुवासरे।
मासे नवम्बरे पूर्णं सप्तविंशतिके दिने।।–पद्य 101

104 पद्यों के इस शतक में मात्र सौंवा पद्य मालिनी छन्द है, शेष सभी अनुष्टुप् में। चतुर्थीशतक जैसा कि पूज्यपाद मिश्र जी ने स्वयं बताया, एक **कूटकाव्य** है जिसे समझ पाना एक टेढ़ी खीर हैं। इसमें पाणिनीय सूत्रों का अद्भुत सन्दर्भों में, चित्र–विचित्र अभिप्राय के साथ प्रयोग किया गया है। ऐसा काव्य समूचे

संस्कृतसाहित्य में दुर्लभ है। मैं स्वयं इसका एक भी पदार्थ नहीं समझ सकी। परन्तु रचनाकार ने जो संकेत दिये उनके आधार पर कुछ कह सकती हूँ। चतुर्थी विभक्ति का प्रयोग तो 'तादर्थ्य' में होता है, अर्थात् किसी के लिए। इस काव्य के पद्य भी **किसी ऐसे दुर्जन के प्रति हैं जिसने कवि को आहत, पीड़ित तथा अवमानित किया।** फलतः कवि का वाक्पौरुष जागा और उसने उसकी दुश्चरित्रता, कृतघ्नता तथा आपातरम्यता का कच्चा चिट्ठा खोल दिया। वह व्यक्ति कौन है? गुरुवर्य के श्रीमुख से उसका नाम तथा कार्तघ्न्य सुन तो चुकी हूँ परन्तु वचनबद्ध हूँ उसे प्रकाशित न करने के लिये। सहृदय जन स्वयं अनुमान लगा सकते हैं।

कवि शतक के अन्त में स्वयं कहता है कि अपनी नीचता से भी तुमने मुझे श्रेष्ठ वैभव ही दिया। ऐसे खलवंशावतंस तुम्हें नमस्कार है। यह तुम्हारा उपकार ही था कि मैं भारत सरकार द्वारा इण्डोनेशिया में विजिटिंग प्रोफेसर नियुक्त हो गया। दशकों में मैंने जैसा कुछ तुम्हें समझा, इस काव्य में प्रस्तुत कर दिया है–

आत्मनीचतया मह्यं ददते श्रेष्ठवैभवम्।
खलवंशावतंसाय चर्चिताय नमो नमः।।
तवोपकारपुण्येन नियुक्तो राष्ट्रशासनैः।
इण्डोनेशियावसुधां गमिष्यामि नमो नमः।।
तव सुचरितलीलां कोनुवेत्तुं समर्थः
कविजनसमवायस्तेऽ धमर्णो विभाति।
द्विदशकमितसंगेनाप्तशक्तिस्तथापि
कतिपयगुणगीतिं तेऽभिराजस्तनोति।।–चतुर्थी0 97–100

सम्बोधनशतकम् मूलतः एक अन्यापदेश–काव्य है जिसमें अनेक छन्दों में सौ पद्य हैं। शतक के प्रथम पद्य में ही कवि, राजर्षि भर्तृहरि की तरह अपनी हृदयव्यथा व्यक्त करते हुए किसी अर्वाचीन पिंगला को सम्बोधित करता है–

मृकारयोगेन मृतासि नूनं दुकारयोगेन च दूषितान्ता।
प्रवीणलूताऽसि लकारयोगात् त्वन्नामसूत्रं मृदुले स्टुटम्मे।।

इस शतक की अनेक अन्योक्तियाँ भावसौन्दर्य तथा भाषापाटव की दृष्टि से अत्यन्त उत्तम हैं। वस्तुतः कविता का मर्म, न तो शब्दयोजना में होता है, न ही वर्णनीय वस्तु में। कवित्व का मर्म होता है कवि की दृष्टि में। वह किसी वस्तु को किसी **विशिष्ट दृष्टि** से समीक्षित करता है।

निम्बवृक्ष को कौन नहीं देखता? सभी देखते हैं। उसके फल आस्वादयोग्य नहीं होते। उस पर चढ़ी तितलौकी चर्चा का विषय बनती है, परन्तु नीम के प्रति कवि की दृष्टि कुछ और है। वह उसे आम्रवृक्ष से भी कहीं अधिक सुरक्षित पाता है और कहता है–

वृथैव दूनं हृदयं विधत्से यदाऽम्रमाध्वीं न गतोऽसि निम्ब!
कथं कटुत्वं नहि शंससि त्वं दण्डप्रहारैरवितोऽसि येन।।

–सम्बो0 पद्य 9

कुछ अन्य सम्बोधनों को भी देखें जो हमें सोचने–समझने को बाध्य करते हैं और कितना आहत हुआ है कवि इनसे!

मलं भक्षयित्वा गृहद्वारभूमिं
नयन्निर्मलत्वं वराहश्चकास्ति।
तमप्याशु ये स्वोदरे स्थापयन्ति
धरामण्डले धन्यधन्यास्त एव!!
यदुत्कोचवृत्त्या भृशं पालितोऽसि
स्वपित्रा कुलानन्दनप्रख्यपुत्र!
मयाऽऽलोकितं तत्फलं यत्त्वमेवं
छविल्लापणेऽत्सि क्वथत्कुक्कुटाण्डम्।।–सम्बो0 पद्य 34, 35

याचना को सम्बोधित कर कवि एक अद्‌भुत व्याख्या करता है जो हृदयंगम करने योग्य है–

माता ते करुणा पिता परिभवो दुर्बुद्धिरेका सखी
ग्लानिस्ते भगिनी विषादतपनौ ख्यातावुभौ सोदरौ।
दारिद्र्यं तव वंशनाम रुचिरं कैर्न श्रुतं सम्मतं
याच्ञे! त्वामधिकृत्य किं किमपरं लोकान्वयं ब्रूमहे।।–पद्य, 94

23 जून 1982 ई0 को हरद्वार के परमार्थआश्रम में प्रणीत किया गया। **धर्मानन्दशतकम्** 1993ई0 में प्रकाशित हो पाया है।[11]

उ0प्र0 के मैनपुरी नगर में स्वामी एकरसानन्द का आश्रम आज भी श्रद्धा, भक्ति एवं विद्या का केन्द्र है। स्वामी एकरसानन्द जी महान् तपस्वी तथा संस्कृत विद्या के महापण्डित थे। उनके शिष्य स्वामी शुकदेवानन्द जी ने भी गुरु के ही समान ख्याति अर्जित की। उन्होंने शाहजहाँपुर नगर के पश्चिमी छोर पर **मुमुक्षुआश्रम** नामक एक नया तपोवन स्थापित किया तथा **दैवीसम्पदमण्डल** की स्थापना की। स्वामी शुकदेवानन्द के ही पट्‌टशिष्य थे स्वामी धर्मानन्द सरस्वती जी महाराज जो महान तपस्वी तथा कविहृदय महापुरुष थे।

प्रो0 अभिराज राजेन्द्र मिश्र के प्रति धर्मानन्द जी का असीम अनुराग एवं वात्सल्य था। प्रत्येक ग्रीष्मावकाश में प्रो0 मिश्र परमार्थ–आश्रम जाते थे एक सप्ताह के लिये। चाँदनी रातों में स्वामी जी उनसे उनकी हिन्दी–भोजपुरी कविताएँ सुनते। इस अवसर पर प्रायः **पद्‌मभूषण डॉ0 रामकुमार वर्मा जी** का भी सान्निध्य प्राप्त होता था।

स्वामी धर्मानन्द जी अत्यन्त मृदुभाषी, सरल, उदार तथा निश्छलहृदय महात्मा थे। उनके सद्‌गुणों से प्रभावित होकर ही कवि ने उनका परिचयात्मक यह शतक लिखा जिसका लोकार्पण स्वामी धर्मानन्द जी के शिष्य स्वामी चिन्मयानन्द जी महाराज (सांसद) ने एक समारोह में किया।

यह शतक श्रद्धा–भक्ति से ओत–प्रोत काव्य है जिसमें कवि ने अपने अध्यात्मगुरु के श्रीचरणों में अपनी भावांजलि प्रस्तुत की है।

यद्‌वाणी निगमागमामृतमयी चित्तव्यथां कृन्तति
यत्स्नेहो ननु सारयत्यनुदिनं सम्मोहकण्डूतिकाम्।
यस्याक्षिप्रभवा कृपा वितनुते चैतन्यसम्पूर्णतां
स स्वामी गुरुतल्लजो मम भवेज्जीवातुसन्धारकः।।

---

11 नेत्रनागंग्रहेन्द्वङ्के रव्रैस्ताब्दे जूनमासके। काव्यं पूर्तिमगादेतत् त्रयोविंशेऽह्नि पावने।।–पद्य, 102

कूपीकृत्य महोदधिं सुरतरूं कृत्वा पलाशक्षुपं
आकाशं श्रुतिशष्कुलीं गिरिवरं वल्मीककल्पं ननु।
धर्मानन्दविभोश्चरित्ररचना गम्भीरवर्ण्या मया
राजेन्द्रेण मलीमसान्धकुधिया गीता, न जाने कथम्।।

–धर्मा0पद्य 99, 100

श्रीकरशूलनाथशतकम् का रचनाकाल है संवत् 2052 विक्रमी की पौष कृष्ण सप्तमी का गुरुवार अर्थात् सन् 1995ई0–

नेत्रबाणखयुग्माऽब्दे वैक्रमे वदि पौषके।
गुरौ पूर्वाह्णसप्तम्यां ग्रन्थश्चायं प्रपूरितः।।

यह लघुकाव्य कवि द्वारा अपने पूज्य अग्रज डॉ0 देवेन्द्र मिश्र के श्री चरणों में समर्पित किया गया है जिनकी 11 नवम्बर 1992ई0 में एक नाव– दुर्घटना में, सई नदी में जलसमाधि लेने से मृत्यु हो गई थी।

करशूलनाथ नाम से प्रख्यात स्वयम्भू शिवलिंग कवि की जन्मभूमि के पास ही, सई नदी के बाएँ तट पर विद्यमान है। यह जौनपुर जनपद का एक महान् शैवतीर्थ है जहाँ एक संस्कृत विद्यालय भी स्थापित है अंग्रेजों के जमाने से ही। प्रो0 मिश्र के छोटे भाई **आचार्य सुरेन्द्र मिश्र जी** इसी विद्यालय में प्राध्यापक रहे। आचार्य सुरेन्द्र एक ऊध्वरेता ब्रह्मचारी थे। उन्होंने अपना भव्य आश्रम भी इसी तीर्थ में, शिवालय की पूर्व दिशा में बनाया था।

इसी आश्रम में **अतिरूद्रमहायज्ञ** 1996ई0 में कवि की जन्मदात्री महीयसी अभिराजी देवी के हाथों सम्पन्न हुआ जिसमें आचार्य रामप्रसाद त्रिपाठी (अभिनवपाणिनि) जी भी सप्ताह भर विद्यमान रहे। लोकविश्रुत इस महायज्ञ के अवसर पर ही कविप्रणीत करशूलनाथशतक का प्रकाशन, लोकार्पण तथा वितरण हुआ।

यह काव्य पौराणिक शैली में लिखा गया है जिसमें कवि की पौराणिकी– प्रतिभा प्रकाशित हुई है। उसने करशूलनाथ तीर्थ से जुड़े गाँवों की जैसी अद्भुत व्याख्या की है वह अद्भुत है। इस माहात्म्य से तीर्थ के प्रति जनता की आस्था और गहरी हो गई।

यह शतक शिव–पार्वती के संवाद रूप में लिखा गया है। उपसंहार (पद्य 101–108) में कवि ने अपना वंश–परिचय दिया है।

परिशिष्ट के रूप में करशूलनाथाष्टकम् तथा करशूलनाथ– स्तोत्रम् को भी जोड़ा गया है। इसी प्रकार, राष्ट्रभाषा हिन्दी में भी करशूलनाथ–आरती तथा दो मधुर भोजपुरी भक्तिगीत शतक के साथ जुड़े हैं।

पंचकुल्या का प्रकाशन 1993ई0 में हुआ, जबकि इसमें संकलित शतकों की रचना कवि ने अपने बालीद्वीपीयप्रवास (1987–89) में ही की थी। इस संकलन में विद्यमान शतकों के नाम हैं–

1. विमानयात्राशतकम्
2. यवद्वीपशतकम्
3. यवसाहित्यशतकम्

4. देववाणीहुंकारशतकम्

यद्यपि सुरभारतीदण्डकम् भी पंचकुल्या में ही संकलित है। तथापि वह शतक नहीं, अपितु दण्डक छन्दों में प्रणीत काव्य है।

विमानयात्राशतक वैमानिक उड़ान के अनुभवों पर आधारित संस्कृत का प्रथम शतककाव्य है। वस्तुतः इसी शतक से विमानकाव्य संज्ञा अर्वाचीन संस्कृत काव्यशास्त्र में आई। यह काव्य कवि की बालीद्वीपीय विमानयात्रा का प्रत्यक्षानुभूत वर्णन है।[12] इसमें कवि ने आकाशमण्डल से देखे दिव्यसूर्योदय का[13], अठखेली करते मेघमण्डल का तथा विमान की विविध गतियों का अद्‌भुत वर्णन किया है। आकाश में उडते विमान पर कवि की उत्प्रेक्षाएँ भी चित्तविनोद पैदा करने में समर्थ हैं। कुछ चित्र देखें– विमान बादलों के ऊपर यूँ उड़ रहा था जैसी कोई तितली श्वेत पुष्पों के वन में भ्रमण कर रही हो, अथवा मानो भगवान् शिव का श्वेत नन्दी वृषभ कैलाश पर्वत को सींगों से उखाड़ रहा हो। बादल यूँ छितराए थे मानो किसी गोचर में भेड़ों का झुण्ड घास चर रहा हो।[14]

ऊपर नीला आकाश तथा नीचे नीला अगाध समुद्र। दोनों मिलकर ऐसे एकरूप हो चले थे कि उन्हें पृथक् करना असंभव हो गया था।

बालीप्रत्यभिज्ञानशतकम् की रचना–तिथि चैत्र कृष्ण तृतीया शनिवार संवत् 2045 (सन् 1999ई0) है। इसमें कुल 151 अनुष्टुप् छन्द हैं। कवि ने इस शतक में पाठकों को बालीद्वीप की पहचान (प्रत्यभिज्ञान) कराई है।

कवि बाली तथा भारत के बीच पुत्री तथा माता का सम्बन्ध मानता है–

भारते भारती माता त्रिवर्णध्वजवन्दिता।
राजते कोटिपुत्राऽसौ बाली तस्याश्च बालिका।।
मातुः पुत्र्याः शरीरे द्वे एक आत्मा परं तयोः।
एक एवोभयोर्धर्मः नभिन्ना हिन्दुसंस्कृतिः।।–बाली0 142, 43

इस शतक में कवि ने बाली द्वीप का आँखों देखा चित्रण किया है। बालीद्वीप जावा के ठीक पूर्व में है। इस द्वीप का विस्तार है– पूर्व से पश्चिम प्रायः 270 कि0मी0 तथा उत्तर से दक्षिण प्रायः 110 कि0मी0। यह द्वीप प्रायः 35 लाख विशुद्ध शैवमतावलम्बी हिन्दुओं का गढ़ है, जहाँ आज भी वैदिक संस्कृति जीवित है। इस द्वीप में बुलेलेंग, बादुंग, जेम्ब्रान, तबानान, ग्यान्यार, करंगसम, क्लुंगकुंग तथा बांगली नामक आठ कमिश्नरियाँ हैं। साराद्वीप महामेरू (गुनुंग अगुंग) बाटुर तथा बटुकारू नामक तीर्थ पर्वतों से युक्त है जिनमें महामेरू ज्वालामुखी है।

बालीद्वीप सघन वेणुवन् कदलीवन, आम्रवण तथा पनसवृक्षों (कटहलों) से ओत–प्रोत है। सैकड़ों प्रकार के सुस्वादु फल, शाक तथा कन्द इस द्वीप में पैदा होते हैं। यहाँ के हिन्दू निराकार शिव के उपासक है।

---

12 ततस्तूर्णतमैर्वैगैर्धावमानं महाजवम्। विमानं वसुधां हित्वा नभोमण्डलमाययौ
ऊर्ध्वं स्कन्धं स्फुरद्‌गत्या निमेषैः कैश्चिदेव सः। चन्द्रतारकमध्यस्थं विमानं तद्‌बभौ ततः।। –विमान0 14, 15

13 आकाशाच्चाप्यधोभागे प्राचीमूले विभावसुः।
तप्तजाम्बूनदच्छायः समुदेति शनैः शनैः।।–विमान0 26

14 तूलराशौयथा काचित्तित्तली प्लवते सुखम्।
ताहशी सुषमा नूनं वायुयानस्य संबभौ।।
यथा या शुभ्रकैलाशे वल्गतेशम्भुवाहनः। ताहशं ननुसौन्दर्यं वायुयानस्य संबभौ।
विमानाघः स्थले कीर्णा असंख्याः श्वेतवारिदाः। दूर्वास्थल्यामभासन्त चरन्तो मेषशाबकाः।।–विमान0 52, 61, 63

कवि ने बाली के सागरतटों (सानुर, कुटाबीच तथा नूसापनीडा) मन्दिर– महोत्सवों (ओडोलान) तथा सामाजिक पर्वों (गलुंगान, कुनिंगान) का रम्य वर्णन किया है। **11वीं शती ई0 में बालीनरेश प्रभु उदयनदेव वर्मा तथा रानी महेन्द्र दत्ता ने यहाँ शासन किया। उदयन विश्वविद्यालय उसी राजा के नाम पर स्थापित है।** इसी विश्वविद्यालय में प्रो0 मिश्र प्रायः तीन वर्ष विजिटिंग प्रोफेसर के पद पर रहे तथा अक्षय कीर्ति प्राप्त की।

यवद्वीपसाहित्यशतकम् की रचना भी सन् 1988 में ही हुई–
शरयुगगगनहगारव्ये ह्याश्विनमासे तिथौ द्वितीयायाम्।
बाल्यां विक्रमवर्षे बुधेऽहिन् पूर्णो निबन्धोऽयम्।।

इस शतक में कुल 102 अनुष्टुप् हैं। इसमें यवसाहित्य (Javanese Literture) का विस्तृत वर्णन किया है कवि ने।

वस्तुतः जब जावा–बाली में हिन्दू उपनिवेशों की स्थापना हुई तब वहाँ कोई साहित्यिक भाषा नहीं थी और न ही कोई साहित्य था। भारतीयों ने स्थानीय मलयभाषा तथा संस्कृत के संगम से एक नई भाषा स्थापित की जिसे प्राचीन जावी (Old Javanese or Java Kuno) कहा गया। इसी भाषा में महाभारत के नौ पर्वों का अनुवाद हुआ तथा प्रायः डेढ़ हजार वर्ष तक भारतीय–वाङ्मय का पुनर्लेखन हुआ।

यवद्वीपीय साहित्य के दो भाग हैं– गद्य तथा पद्य, जिन्हें यहाँ पर्व तथा काण्ड कहते हैं। शास्त्रों को तुतुर (तत्त्वशास्त्र) कहा जाता है। यह साहित्य संस्कृत के ही समान विस्तृत तथा उच्चकोटिक है। पद्य साहित्य का सर्वश्रेष्ठ महाकाव्य है– योगीश्वरप्रणीत **रामायणककविन्**। इसकी रचना नवीं शतीं ई0 के अन्तिम चरण में महाराज बलितुंग के शासनकाल में हुई। इसमें कुल 26 सर्ग तथा 2778 पद्य हैं जो संस्कृत छन्दों में प्रणीत हैं।

कवि ने सम्पूर्ण यवद्वीपीय साहित्य का नाम्ना परिचय देते हुए शास्त्रों को भी गिनाया है–
अर्जुनविजयं काव्यं सुतसोमं च जातकम्।
कार्तवीर्यकथा काव्ये चतुर्दशतमे शते।।
काव्यं ब्रह्माण्डपुराणं कुंजरकर्णसंज्ञितम्
अर्जुनसहस्रबाहुनाम्नाख्यातं तृतीयकम्।।
पार्थयज्ञं ततस्तुर्यं किरातार्जुनवृत्तकम्।
कालवनान्तकाख्ये रम्याभागवतीकथा।।

–यवद्वीप0 54–58

शास्त्राणां भूयसी संख्या पशुपक्षिकुलाश्रया।
अनन्ता ग्रंथसंख्यापि नाऽत्र सर्वं प्रदीयते।।
भूकम्पविषयोग्रंथः भगवान् गर्गनामकः
परिवेशो महामारी दुर्लक्षणनिवेदकः।।
मुहूर्तलक्षणे योगाः सन्धिसूत्रे च लेखनम्
अमरास्त्रिदशाः प्रोक्ता इत्यस्मिन् शब्दसंचयः।।
क्रीडाक्षरे लेखविधिः रोगाश्चन्द्रप्रमाणके।
किर्तवासे च विज्ञानं भाषायाः सन्निवेशितम्।।

–यवद्वीप0 94–97

देववाणीहुंकारशतकम् की रचनातिथि 1988ई0 है।[15] जब भारत में तत्कालीन प्रधानमंत्री राजीवगान्धी ने त्रिभाषा–फॉर्मूला में संस्कृत को शामिल नहीं किया तो समूचे राष्ट्र में संस्कृत–भक्तों ने आन्दोलन किया। इस समाचार को, बालीद्वीप में सुनकर कवि भी क्षुब्ध हो उठा और उसी मनोदशा में उसने देववाणीहुंकारशतकम् का प्रणयन किया।

पूरा शतक देववाणी के मुख से ही व्यक्त कराया है कवि ने। इसमें संस्कृत भाषा की सार्वभौमिकता, शक्तिमत्ता तथा उसकी अपरिहार्यता का बेबाकी के साथ वर्णन किया गया है। सम्पूर्ण शतक प्रत्येक राष्ट्रभक्त भारतीय के पढ़ने योग्य है। कवि सान्त्वना के स्वर में समझाता है संस्कृतप्रेमियों को–

संस्कृतज्ञा विषादं मा यान्तु भद्राः अनेन वै।
कस्यापि भाविवृत्तस्य पूर्वमेतद्विधानकम्।।
स्थिरा भाषा स्थिरो लोकः स्थिरा ज्ञानपरम्परा।
शासनं न चिरस्थायि फेनबुद्बुदसन्निभम्।।
नो मृता म्रियते नोऽद्य नो भविष्ये मरिष्यति।
आकल्पं देववाणीयं भारते प्रचरिष्यति।।

कवि की घोषणा तो देखिये कि **राजीव गान्धी भी अकालकवलित हो गये तथा उनका शासन भी।**

पंचकुल्या संकलन का ही एक काव्य है– **संस्कृतशतकम्**। यह शतककोटि की रचना स्वतंत्र तथा पृथक् रूप से भी प्रकाशित हुई है।

कस्मादध्येयं संस्कृतम्? हमें संस्कृत क्यों पढ़ना चाहिए? इस प्रश्न का उत्तर देने के ही लिये कविमूर्द्धन्य प्रो0 अभिराजराजेन्द्र ने संस्कृतशतकम् की रचना की। इस काव्य के अनेक पद्य **माननीय राजा कर्ण सिंह जी** अपने व्याख्यान में उद्धृत किया करते हैं। यह एक गौरव की बात है। इस शतक में प्रो0 मिश्र ने स्पष्ट बताया है कि संस्कृताध्ययन के क्या–क्या लाभ हैं? यदि आप मृत्युभय से मुक्ति चाहते हैं, यदि आप आध्यात्मिक तथ्यों को समझना चाहते हैं कि मृत्यु के अनन्तर प्राणी जाता कहाँ है? लौटता कहाँ से है? पा_चभौतिक शरीर की रचना होती कैसे है? सृष्टि का अनुभव क्या है? तो इन सारे अबूझ प्रश्नों का उत्तर जानने के लिये संस्कृताध्ययन अनिवार्य है।

कवि संस्कृत भाषा के प्रति अपनी अटूट निष्ठा व्यक्त करते हुए कहता है– हे परमेश्वर! संस्कृत से ही मेरा प्रभात हो, मेरी सन्ध्या हो! जन्म–जन्म में संस्कृत के प्रति मेरी निष्ठा बनी रहे। संस्कृत ही मेरा जीवनावलम्ब बने।

प्रत्येक संस्कृतज्ञ को संस्कृतशतकम् कण्ठस्थ करने योग्य कृति है। इस काव्य की रचना के सन्दर्भ में कवि का उद्देश्य है संस्कृत का जन–जन में प्रचार करना।[16]

---

15 नागनागरसेन्द्वब्दे रिव्रस्तारव्ये जूनमासके।
शुभेऽपराह्णे श्लोकानां शर्तीयं पूर्णतामगात्।।–देव0 102

16 संस्कृतामृतगर्भावाक्देवचारित्र्यशंसिनी।
यां पठित्वाऽनभिज्ञोऽपि कलां दैवीं समश्नुते।।
सुवर्णपुष्पां पृथिवीं चिन्वन्ति पुरुषास्त्रयः।
संस्कृताधीतिनो गेहे पौत्रः पुत्रः पितामहः।।
जातो न जातको यस्मिन् संस्कृतज्ञो गृहागङ्णे।
वृथैव तस्य निर्माणे प्रतीता वास्तुसारणी।।–संस्कृत0 87, 90, 91

सपर्याशतकम् का प्रथम प्रकाशन **नवाष्टकमालिका** के नाम से हुआ था। गणपति तथा कवि सहित विविध देवों के नौ शीर्षकों से अष्टकों की रचना कवि ने की है। परन्तु फलश्रुति के पद्यों को मिलाकर पद्यों की संख्या सौ हो जाती है। अतएव इसे सपर्याशतक नाम दिया गया है। यह शतक भी मूलतः स्तुतिपरक है तथापि इन स्तुतियों में प्रतिपद नयापन है। स्तनन्धयक्रन्दनम् भगवती दुर्गा को अर्पित है तो आशुतोषाराधनम् शिव को। दुकूलचौरचरितम् कृष्ण को अर्पित है तथा सवैया छन्दों में प्रणीत किया गया है।

शताब्दीशतकम् का प्रकाशन 1987 ई0 में इलाहाबाद विश्वविद्यालय की शताब्दी (1887–1987) के अवसर पर किया गया। इस काव्य में इलाहाबाद विश्वविद्यालय की स्थापना का सांगोपांग प्रामाणिक इतिहास प्रस्तुत किया गया है। विश्वविद्यालय के स्वनामधन्य, विश्वख्याति अर्जित करने वाले कुछ महान आचार्यों का संक्षिप्त परिचय भी कवि ने दिया है इस काव्य में। काव्य के अन्त में कुछ परिशिष्ट है जिसमें प्रारम्भ से 1987ई0 तक के कुलाधिपतियों तथा कुलपतियों की नामावली प्रस्तुत की है। ऐतिहासिक दृष्टि से यह शतक संग्रहणीय है। इस शतक में पद्यों की संख्या 150 है।

मृगमृगेन्द्रान्योक्तिशतकम् तथा **तुलसीप्रशस्तिशतकम्** का प्रकाशन भी स्वतंत्र शतक के रूप में दो पृथक् संस्थाओं द्वारा किया गया है। इनमें प्रथम अर्थात् मृगमृगेन्द्रान्योक्तिशतकम् का पद्यभावानुसारी अति आकर्षक रेखाचित्रों के साथ, श्रीभद्रंकरोदय ट्रस्ट गोधरा (गुजरात) ने 2008ई0 में प्रकाशन किया। इसमें मृग तथा मृगांक (सिंह) से सम्बद्ध पचास–पचास अन्योक्तियाँ वसन्ततिलक छन्द में संकलित की गई है।

आर्यान्योक्तिशतकम् तथा सम्बोधनशतकम् के बाद प्रो0 मिश्र का यह तीसरा अत्यन्त प्रौढ़ किन्तु सरस अन्योक्ति–काव्यसंग्रह है। इस काव्य की विशेषता है कि इसमें अन्योक्तियाँ मृग तथा मृगेन्द्र के जीवन के पचास तीते–मीठे अनुभवों से हमें जोड़ती हैं। पाश्चात्तापग्रस्त सिंह, अभिशप्त सिंह, वत्सलसिंह, नृशंससिंह, व्याधिग्रस्त सिंह तथा भोगासक्त सिंह आदि शीर्षक स्वयमेव सिंह के विविध रूप प्रस्तुत करते हैं। कुशल चित्रकार के चित्रों से इन अन्योक्तियों का भाव–सौन्दर्य विलक्षण बन गया है। कुछ पद्य द्रष्टव्य हैं–

न श्रूयते श्रवणरन्ध्रविदारिनादोऽरण्यस्थकेसरिकदम्बकनायकानाम्।
कालं नयत्यभयमायुष एणकोऽयं यूथच्युतोऽपि नृपरक्षितमन्दुरायाम्।।
हन्यन्त एव वधिकैः किल पापवृत्तैः प्राणव्यथामहह भूरि च ये सहन्ते।
नित्याधमर्ण इव भाति चिराय तेषां कस्तूरिकागुणविदेष विरंचिपादः।
मा ते भयं भवतु गच्छ कुरंगबाल! स्वैरं वनीषु विहरस्व सुखं लभस्व।।
नेयं वधाय तव युक्तघटीतिचित्ते कृत्वा हरिस्तददनाद्विमुखीबभूव।।

–मृग0 9, 46, 59

तुलसीप्रशस्तिशतकम् तेरापंथ–सम्प्रदाय के नवप्रशास्ता जैनाचार्य, श्रीतुलसीगणि के जीवन पर आधारित है तथा जैन विश्वभारती, लाडनूँ द्वारा 2014ई0 में, तुलसी–शताब्दी के अवसर पर प्रकाशित किया गया।

श्रीतुलसी गणि अणुव्रत–आन्दोलन के महान् प्रवर्तक जैनाचार्य थे जो अनेकान्त दर्शन के माध्यम से आंतकवाद को समाप्त करने के पक्षधर थे। अपना यह प्रस्ताव उन्होंने प्रधानमंत्री पं0 जवाहरलाल नेहरू के समक्ष रखा भी था। वह संस्कृत, हिन्दी तथा राजस्थानी भाषा के श्रेष्ठ कवि भी थे।

कवि ने यह काव्य मात्र एक ही रात में लिख डाला श्रद्धेय **समणीअध्यक्षाकनकप्रभा** की प्रेरणा से। इसमें शास्ता तुलसीगणि का सारस्वत व्यक्तित्व अंकित है।

पंचकुल्या तथा **अभिराजसप्तशती** की परम्परा में प्रो0 मिश्र का तीसरा बृहत् शतक–संग्रह **अभिराजसहस्रकम्** सन् 2000 ई0 में प्रकाशित हुआ है। इसमें कुल दस शतक संकलित हैं जिनका नाम है– प्रबोधशतक, भोजशतक, हिमाचलशतक, भारतीपरिदेवनशतक, उज्जयिनीशतक, वैशालीशतक, विस्मयशतक, सौवस्तिकशतक, गुर्जरशतक तथा पाकशासनशतक।

यद्यपि इन दसों शतकों की सामूहिक प्रकाशन तिथि संस्कृत वर्ष सन् 2000 ई0 है तथापि ये सभी शतक विभिन्न कालखण्डों तथा अवसरों पर लिखे गए हैं।

प्रबोधशतक प्रबोधिनी एकादशी के अवसर पर प्रारम्भ होने वाले विश्वविख्यात कालिदास–महोत्सव को दृष्टि में रखकर लिखा गया है। इसमें विरही यक्ष द्वारा प्रिया यक्षिणी के लिये प्रेषित प्रबोधात्मक सन्देश हैं। उस दृष्टि से इस काव्य को मेघदूत का उपांग अथवा पूरक कहा जा सकता है। **जो कुछ बातें कालिदास का यक्ष मेघदूत में नहीं कह पाया था वे सारी दाम्पत्य–रस की बातें अभिराजराजेन्द्र जी का यक्ष इस काव्य में व्यक्त करता है।** प्रतिभा का सन्निवेश, प्रेम का गाम्भीर्य तथा अभिप्रायों का नयापन देखते ही बनता है। **कहीं कहीं तो कवि कालिदास का अतिशय करता प्रतीत होता है।** विरही यज्ञ के कुछ प्रबोध पद्यों से यह बात प्रमाणित हो जायेगी। वह कहता है यक्षिणी से–

त्वया वियुक्तोऽहमरण्यभूमौ यदेकवर्षं क्षपयामि शप्तः।
तद्धायनं नो गणयामि बाले! निजायुषो धातृकृतप्रताने।।
न मेऽभिधित्सा भजतेऽवसानं प्रिये! कियन्मात्रमहं लिखानि?
क्वाऽजीवनं भूरिवचस्समाप्यं वियोगवृत्तं क्व च पत्रखण्डम्।।
हिमावृतं पर्वतराजवक्षः पर्णीभवेत्सिन्धुजलं मसी च।
स्याल्लेखनी नन्दनपारिजातः शक्ष्यामि वक्तुं स्वरूजं तदैव।।
न ते न जानामि दुरन्तदैन्यं तथापि वच्मि स्वकमेव वृत्तम्।
स्वतः प्रमाणेन समग्रलोको दुःखं सुखं वा नियतं चिनोति।।

–प्रबोध0 44–46

भोजशतक का दूसरा नाम **धारामाण्डवीयशतक** भी है। आद्यन्त स्रग्धरा वृत्तों में प्रणीत, मालवेश्वर भोज के विलक्षण बहुरंगी व्यक्तित्व का प्रस्तावक यह काव्य अत्यन्त प्रौढ़ कृति है। इसका प्रथम पद्य ही अद्भुत श्लेष के साथ प्रारम्भ होता है–

धत्ते यो वारिधारां तमिह सविनयं मन्महे भोजमेघं
धत्तेऽयोवारिधारां तमिह सविनयं मन्महे भोजखड्गम्।
धत्ते यो वाऽरिधारां तमिह सविनयं मन्महे भोजभूपं
धत्ते यो वा रिधारां तमिहं सविनयं मन्महे भोजदेशम्।।

इस काव्य में कवि ने मालवेश्वर भोज के वंश, प्रताप, शौर्य, दिग्विजय, पाण्डित्य तथा लोकव्यापी यश का अप्रतिम वर्णन किया है। इतिहास–प्रसिद्ध अन्य नरपतियों से भोजदेव, कई क्षेत्रों में आगे थे, ऐसा कवि का मन्तव्य है। वह कहता है–

चन्द्रस्साम्राज्यवेधाश्चणकसुतमतो धर्मरक्षोऽप्यशोकः
यज्वाऽभूत्पुष्यमित्रो नृपनयनिपुणो विक्रमार्कश्शकारिः।
स्कन्दो हूणावरोद्धा सुरगृहरचनैः पल्लवा व्योमरूढाः
किन्त्वस्मद्भोजराजे सकलगुणगणाः सार्धमेवोपपन्नाः।।
राजानोऽस्यां धरित्र्यां कतिकति न बभुस्सात्त्विकास्तामसाश्च
वेनोवैन्योऽथवोभौ विषमरूचिधरौ रक्षको भक्षकश्च।
ज्येष्ठः श्रेष्ठोमहिष्ठोऽवनिनृपपरिधौकिन्तु धारेश्वरौऽसौ
यस्मिन् बद्धादराः स्युः प्रमथितरिपवश्चापि पात्रानुरोधात्।।

–धारा0 5, 7, 96

हिमाचलशतक सन् 1991ई0 की कृति है, जब प्रो0 मिश्र ने अपनी कर्मभूमि प्रयाग को छोड, देवभूमि शिमला में पदार्पण किया था। सम्पूर्ण काव्य पर्वतीय रूप–सौन्दर्य की विलक्षण झाँकियों से ओत–प्रोत है। इस काव्य में कुछ पद्य हैं जिनमें शिमला नगर का सौन्दर्य वर्णित करता है कवि–

हिमाचलांकस्थितपार्वतीव प्रमत्तशम्भ्वङ्घ्रियुगानुरागा।
पुरी यदंके प्रविभाति नूनं श्रीमाल्यतुल्या शिमलाभिधाना।।
विद्युत्प्रकाशैः सितपीतरक्तैर्द्युतिं निशायां परितः किरन्ती।
तनोति विच्छित्तिविशेषरम्या पुरी जनानामचिरप्रमोदम्।।
ज्वलत्प्रदीपावलिजातशोभा सान्द्रद्रुमच्छायतमोविमिश्रा।
विभाति खद्योतसहस्रनद्धा सस्यान्विता भूरिव या रजन्याम्।।

–हिमाचल0 15, 16, 17

भारतीपरिदेवनशतक का अर्थ है भारती अर्थात् भारतभूमि का विलाप। करुणरस से प्रतिपद–सिक्त यह शतक भी प्रधानमंत्री **राजीव गान्धी** की पेरुम्बुदूर में की गई नृशंस हत्या के अवसर पर, एक ही साँस में (प्रातः प्रारम्भ कर रात के तीन बजे समाप्त) लिखा गया था। युवाहृदय–सम्राट् राजीव गान्धी सचमुच सौजन्य, औदार्य तथा आर्जव की मूर्ति थे। प्रो0 मिश्र का उनसे व्यक्तिगत सम्बन्ध था। प्रो0 मिश्र को सक्रिय राजनीति में लाने के ही लिये **उन्होंने 1985 के चुनाव में प्रो0 मिश्र को उ0प्र0 के रारी विधानसभा क्षेत्र से स्वयं मनोनीत किया था**। वह समय–समय पर मिश्र जी को स्वयं पत्र लिखते थे जो आज भी सुरक्षित हैं।

ऐसे महामनस्वी को राजनीति निगल गई। भारत का भविष्य ही मटियामेट हो गया। उस दुरन्त व्यथा को कबिने भारत माता के मुख से ही व्यक्त कराया है–

हा हतास्मि निराधारा निरालम्बा निराकुला।
यदद्य त्वयका हीना विधिनाऽपुत्रकाकृता।।
अकालजलदाच्छन्नं त्वामपश्यदिदं जगत्।
तमस्सिन्धुनिमग्नं हा नारकं दुःखमश्नुते।।–भारती0 9, 9

उज्जयिनीशतकम् में महाकाल की नगरी में प्रतिवर्ष आयोजित होने वाले (प्रबोधिनी एकादशी से प्रारम्भ एक सप्ताह का) कालिदास–महोत्सव का आँखों देखा वर्णन प्रस्तुत किया गया है। चूँकि कवि 1968ई0 से ही इस समारोह में जाता रहा है अतः उसकी स्मृति में उस महोत्सव की सैकड़ों छवियाँ अंकित हैं। कवि ने पचासों लोकविश्रुत विद्वानों तथा घटनाओं का विवरण इस काव्य में दिया है जो कि संस्कृत की नई पीढ़ी के लिये अत्यन्त ज्ञानवर्धक है।

स्मराम्युत्सवरम्याभां कमलां तां यशस्विनीम्।
देवलोकाश्रयप्रीत्या नैषमो हा विलोकिता।।
स्मृतिमात्राऽवशेषासावुमाशंकरजोशिनाम्।
वक्तृता धीरगम्भीरा कालिदासानुशीलनी।।

–उज्ज0 96, 97

वैशालीशतकम् की रचना कवि ने मुजफ्फरपुर (बिहार) यात्रा के सन्दर्भ में, बिहार विश्वविद्यालय के गेस्ट हाउस में की है। यह यात्रा–वर्णन केन्द्रित है बुद्धयुगीन वैशाली की संस्कृति पर।

कलासाहित्यसंगीतविचाराचारसंयमैः।
समग्रे भारते वर्षे चर्चिताऽभूद्यशस्विनी।।
निखिला एव पन्थानो वैशाल्यभिमुखं ययुः।
कदाचिदिति लोकोक्तिः प्रथिताऽसीदनेहसि।।
नगरी सैव वज्जीनां सन्दष्टा कालभोगिना।
हन्त भग्नावशेषेषु दृश्यते विषमूर्च्छिता।।

–वैशाली0 83, 84, 85

विस्मयशतकम् को विस्मयलहरी भी कहा गया है। यह एक राष्ट्रिय काव्य है जिसमें अधिक्षेपपरकशैली में कवि ने अनेक ओछे व्यवहारों तथा घटनाओं के प्रति विस्मय प्रकट किया है। राष्ट्र के चारित्रिक अघः पतन का दस्तावेज सा प्रतीत होता है यह काव्य! कुछ पद्य द्रष्टव्य हैं–

क्षुत्क्षामकण्ठो म्रियते विपन्नो मधुस्वरः पंजरबद्धकीरः।
द्राक्षां खराः सादरमास्वदन्ते दृष्ट्वेति मे विस्मयमेतिचित्तम्।।1
कुलंन शीलं समयो न धर्मः न चापि लोकाभ्युदयस्य चिन्ता।
अन्योहिपन्थाश्चलचित्रभाजां दृष्ट्वेति मे विस्मयमेति चित्तम्।।10
क्व जन्मदाता जनकः क्वपुत्री
क्व सोदरौ ज्येष्ठकनिष्ठकौ वा।
सर्वे सहास्थाय पिवन्त्यपेयं
दृष्ट्वेति मे विस्मयमेति चित्तम्।।
न यन्निगूढ़ं प्रमदेतिवृत्तं
पुम्भिः समाजे श्रवणीयमासीत्।
तैरक्षिलक्ष्यीक्रियते तदेव
दृष्ट्वेति मे विस्मयमेतिचित्तम्।।–पद्य 18, 19

प्रो0 मिश्र देववाणी परिषद (आर0 6 वाणीबिहार, नई दिल्ली) के अध्यक्ष रहे। उनका कार्यकाल पूर्ण होने पर उनके उत्तराधिकारी के रूप में प्रो0 राधावल्लभ त्रिपाठी को प्रतिष्ठित किया गया। यह सारा कार्य

मैनुपरी (उ0प्र0) के एकरसानन्दमहाविद्यालय में आयोजित एक समारोह में सम्पन्न हुआ। अपनी विदाई (सौवस्तिक) के अवसर पर प्रो0 राजेन्द्र मिश्र ने संस्कृत के वर्तमान तथा भविष्य को लेकर जो सारगर्भित भाषण दिया था, **सौवस्तिकशतकम्** उसी का काव्यरूपान्तर है। इस काव्य में कवि ने संस्कृतज्ञों को अपने कर्तव्य तथा दायित्व के प्रति सचेत किया है तथा संस्कृत से जुड़ी समस्याओं की निष्पक्ष समीक्षा की है। वह कहते हैं–

हन्त कीदृक्विपर्यासो दृश्यते किल भारते।
समर्थ्यते तमस्काण्डं प्रकाशो यत्र निन्द्यते।।51
दोग्ध्री धेनुरिव प्रांशुर्वाञ्छादोहा यशस्विनी।
देववाणी बहुक्षीरा पामरैः समुपेक्ष्यते।।52
नित्यं छाग्यश्च सेव्यन्ते स्वल्पदुग्धाः प्रयत्नतः।
प्रदुह्यन्तेऽथवा मेष्यो मुष्टिकाभिःस्तने हताः।।53

गुर्जरशतक कवि की गुजरातयात्रा पर आधारित शतक हैं। इसमें गुजरात के सांस्कृतिक, धार्मिक, राजनैतिक तथा साहित्यिक अवदान का मूल्यांकन किया गया है। कुछ पद्य देखें–

सामवेदप्रचारः स्यादानर्तस्य प्रशासनम्।
कृष्णभक्त्युदयो वापि जैनधर्माश्रयोऽथवा।।
लाटीरीतिप्रतिष्ठा स्यात्काव्यमाधुर्यशंसिनी।
पदबन्धैकविच्छितिप्रवणा वा म्रदीयसी।।
यया कयापि सद्दृष्ट्या वीक्षितागुर्जरावनी।
दैवीकलाभिरापूर्णा प्रतिभाति प्रमोदिनी।।
समुद्गिरन्ती सच्छस्यं कृष्णवर्णा महोर्वरा।
रंजिताद्यापि भात्येव कृष्णप्रीत्या प्रगाढया।।

–गुर्जर0 77, 78, 80, 81

पाकशासनशतक में सन् 1999 में लड़ी गई कार्गिल की लड़ाई का वर्णन है जिसमें भारत के रणबाँकुरों ने कायर तथा नपुंसक पाक सैनिकों के छक्के छुड़ा दिये थे। इस शतक का शीर्षक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। **पाक** नामक दानव का दमन करने के कारण, देवराज इन्द्र को **पाकशासन** कहा गया है। कवि ने भारतीय योद्धाओं को भी पाकशासन कहा है जिन्होंने पाक को युद्ध में धूल चटा दी। राष्ट्रिय भावना एवं युद्धशौर्य से ओत–प्रोत यह शतक कार्गिलयुद्ध की दैनन्दिनी (डायरी) सा प्रतीत होता है।

पाकनामा बभूवात्र दानवः कोऽपि भारते।
इन्द्रः पाकं निहत्यैव संजातः पाकशासनः।।
आत्मदृष्ट्या भवेन्नूनं पाकशब्दप्रयोगतः।
पाकिस्तानाख्यदेशोऽयं शुचित्वस्योपलक्षणम्।।
नृशंसाचरणैः स्वीयैरीर्ष्याद्वेषसमन्वितैः।
कृतेऽयं भारतीयानां किन्तु पाकाख्यदानवः।।

कवि ने जसवीर सिंह, विजयन्त थापर, वीरविश्राम, शंकर नायक हनीफुद्दीन तथा उद्धव आदि की शौर्य–घटनाओं का अद्भुत वर्णन किया है तथा समूचे राष्ट्र को उन वीरों का कर्जदार बताया है, जो देश की रक्षा के लिये मर मिटे–

प्राणान् ददुर्महावीराः किन्तुये राष्ट्ररक्षकाः।
नित्यावलम्बभूता ये पितृभार्याकुटुम्बिनाम्।।
अधमर्णा वयं सर्वे तेषां नूनं हुतात्मनाम्।
विहाय सकलान्भोगान् नव्ये वयसि ये गताः।।

—पाक0 107, 108